न्यायपालिका की स्वतंत्रता का सिद्धांत

drishtiias.com/hindi/printpdf/principle-of-independence-of-the-judiciary

प्रीलिम्स के लिये:

अंतर्राष्ट्रीय न्यायिक सम्मेलन 2020, एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ 1981, वर्ष 1993 का द्वितीय न्यायाधीश केस, न्यायिक चार्टर

मेन्स के लिये:

न्यायपालिका की स्वतंत्रता

चर्चा में क्यों?

हाल ही में उच्चतम न्यायालय के एक न्यायाधीश ने अंतर्राष्ट्रीय न्यायिक सम्मेलन 2020 (International Judicial Conference 2020) में भारत के प्रधानमंत्री की प्रशंसा की वहीं हाल ही में प्रधानमंत्री ने भी उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गए कुछ 'महत्वपूर्ण निर्णयों' का हवाला देते हुए उच्चतम न्यायालय की सराहना की थी। इससे न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच बढ़ती घनिष्ठता से संवैधानिक व्यवस्था पर गंभीर सवाल उठ रहे हैं।

मुख्य बिंदु:

उपरोक्त घटनाक्रम को देखें तो कार्यपालिका और न्यायपालिका आपस में मेल-जोल प्रतीत होता है जबकि भारतीय संविधान में दोनों की स्वतंत्रता की बात कही गई है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता

(Independence of The Judiciary):

न्यायपालिका की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था का आधार स्तम्भ है। इसमें तीन आवश्यक शर्तें निहित हैं-

1. न्यायपालिका को सरकार के अन्य विभागों के हस्तक्षेप से उन्मुक्त होना चाहिये।
2. न्यायपालिका के निर्णय व आदेश कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका के हस्तक्षेप से मुक्त होने चाहिये।
3. न्यायाधीशों को भय या पक्षपात के बिना न्याय करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये।

एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ **1981**

(S.P. Gupta vs Union Of India 1981)

- वर्ष 1981 के एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ मामले में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने कहा था कि न्यायाधीशों को आर्थिक या राजनीतिक शक्ति के सामने सख्त होना चाहिये और उन्हें **विधि के शासन** (Rule of Law) के मूल सिद्धांत को बनाए रखना चाहिये।
- विधि का शासन न्यायपालिका की स्वतंत्रता का सिद्धांत है जो वास्तविक सहभागी लोकतंत्र की स्थापना करने, एक गतिशील अवधारणा के रूप में कानून के शासन को बनाए रखने और समाज के कमज़ोर वर्गों को **सामाजिक न्याय** (Social Justice) प्रदान करने हेतु महत्वपूर्ण है।

विधि का शासन **(Rule of law):**

विधि का शासन या कानून का शासन (Rule of law) का अर्थ है कि कानून सर्वोपरि है तथा वह सभी लोगों पर समान रूप से लागू होता है।

सामाजिक न्याय **(Social Justice):**

सामाजिक न्याय का उद्देश्य राज्य के सभी नागरिकों को सामाजिक समानता उपलब्ध करना है। समाज के प्रत्येक वर्ग के कल्याण के लिये व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आज़ादी आवश्यक है। भारत एक कल्याणकारी राज्य है। यहाँ सामाजिक न्याय का अर्थ लैंगिक, जातिगत, नस्लीय एवं आर्थिक भेदभाव के बिना सभी नागरिकों की मूलभूत अधिकारों तक समान पहुँच सुनिश्चित करना है।

- न्यायपालिका को संविधान में उल्लेखित प्रावधानों की व्याख्या करते समय विधि के शासन को ध्यान में रखना चाहिये।
- न्यायिक प्रशासन को संविधान से कानूनी मंजूरी प्राप्त है और इसकी विश्वसनीयता लोगों के विश्वास पर टिकी हुई है और उस विश्वास के लिये न्यायपालिका की स्वतंत्रता अपरिहार्य है।

वर्ष **1993** का द्वितीय न्यायाधीश केस

(The Second Judges Case of 1993):

- वर्ष 1993 के 'सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स-ऑन-रिकॉर्ड एसोसिएशन' (SCARA) बनाम भारत संघ मामले में नौ न्यायाधीशों की एक संविधान पीठ ने वर्ष 1981 के एसपी गुप्ता मामले के निर्णय को खारिज़ कर दिया और उच्चतम/उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं स्थानांतरण के लिये 'कॉलेजियम सिस्टम' नामक एक विशिष्ट प्रक्रिया तैयार करने की बात कही।
- साथ ही संवैधानिक पीठ ने कहा कि उच्चतम/उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिये केवल उसी व्यक्ति को उपयुक्त माना जाना चाहिये जो सक्षम, स्वतंत्र और निडर हो।
    कानूनी विशेषज्ञता, किसी मामले को संभालने की क्षमता, उचित व्यक्तिगत आचरण, नैतिक व्यवहार, दृढ़ता एवं निर्भयता एक श्रेष्ठ न्यायाधीश के रूप में उसकी नियुक्ति के लिये आवश्यक विशेषताएँ हैं।

आचरण का मानक

(Standard of conduct):

- वर्ष 1995 के 'सी. रविचंद्रन अय्यर बनाम न्यायमूर्ति ए.एम. भट्टाचार्जी एवं अन्य' मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि एक न्यायाधीश के लिये आचरण का मानक सामान्य जन के आचरण के मानक की अपेक्षा अधिक है। इसलिये न्यायाधीश समाज में आचरण के गिरते मानकों में आश्रय लेने से उनके द्वारा दिये गए निर्णयों से न्यायिक ढाँचा बिखर सकता है।
- उच्चतम/उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों को मानवीय दुर्बलताओं और कमजोर चरित्र से युक्त नहीं होना चाहिये। बल्कि उन्हें किसी आर्थिक, राजनीतिक या अन्य किसी भी प्रकार दबाव में आये बिना जनता के प्रति संवेदनशील होना चाहिये। अर्थात् न्यायाधीशों का व्यवहार लोगों के लिये लोकतंत्र, स्वतंत्रता एवं न्याय प्राप्ति का स्रोत होता है तथा विरोधाभासी 'विधि के शासन' की बारीकियों तक पहुँचता है।

फ्रांसिस बेकन ने न्यायाधीशों के बारे में कहा है कि "न्यायाधीशों को मज़ाकिया से अधिक प्रबुद्ध, प्रशंसनीय से अधिक श्रद्धेय और आत्मविश्वास से अधिक विचारपूर्ण होना चाहिये। सभी चीजों के ऊपर सत्यनिष्ठा उनकी औषधि एवं मुख्य गुण है। मूल्यों में संतुलन, बार कौंसिल और न्यायिक खंडपीठ के बीच श्रद्धा, स्वतंत्र न्यायिक प्रणाली की बुनियाद है।"

न्यायिक चार्टर (Judicial Charter):

- इसे 'न्यायिक जीवन के मूल्यों का पुनर्स्थापन' (The Restatement of Values of Judicial Life) नामक चार्टर भी कहा जाता है। इसे उच्चतम न्यायालय ने 7 मई, 1997 को अपनाया था।

- यह एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायपालिका के लिये मार्गदर्शक के रूप में कार्य करता है। यह न्यायिक नैतिकता के सिद्धांतों की एक पूरी संहिता है। जो निम्नलिखित हैं-
    1. न्याय केवल होना ही नहीं चाहिये बल्कि इसे होते हुए देखा भी जाना चाहिये। उच्चतर न्यायपालिका के सदस्यों का व्यवहार एवं आचरण न्यायपालिका की निष्पक्षता के प्रति लोगों के विश्वास की पुष्टि करता है।
    2. एक न्यायाधीश को एक क्लब के किसी भी कार्यालय, समाज या अन्य ऐसोसिएशन से चुनाव नहीं लड़ना चाहिये इसके अलावा वह कानून से जुड़े समाज को छोड़कर इस तरह के ऐच्छिक कार्यालय से संबद्ध नहीं रहेगा।
    3. बार कौंसिल के व्यक्तिगत सदस्यों के साथ घनिष्ठ संबंधों विशेष रूप से जो एक ही अदालत में अभ्यास करते हैं, से परहेज़ करना चाहिये।
    4. यदि बार कौंसिल का कोई सदस्य न्यायाधीश के समक्ष पेश होने के लिये उसके करीबी संबंधियों के साथ आता है तो एक न्यायाधीश को अपने परिवार के किसी भी सदस्य जैसे पति या पत्नी, बेटा, बेटी, दामाद या बहू या कोई अन्य करीबी रिश्तेदार को अनुमति नहीं देनी चाहिये।
    5. न्यायाधीशों के परिवार का कोई भी सदस्य जो बार का सदस्य है, को उस निवास का उपयोग करने की अनुमति नहीं दी जाएगी जिसमें न्यायाधीश वास्तव में निवास करते हैं या पेशेवर काम के लिये अन्य सुविधाएँ हैं।
    6. एक न्यायाधीश को अपने कार्यालय की गरिमा के अनुरूप पृथकता का स्तर (Degree of Aloofness) बनाये रखना चाहिए।
    7. एक न्यायाधीश एक ऐसे मामले की सुनवाई एवं निर्णय नहीं करेगा जिसमें उसके परिवार का कोई सदस्य, कोई करीबी रिश्तेदार या मित्र संबंधित हो।
    8. एक न्यायाधीश सार्वजनिक बहस में भाग नहीं लेगा तथा राजनीतिक मामलों पर या लंबित मामलों पर जनता के बीच अपने विचार व्यक्त नहीं करेगा।
    9. एक न्यायाधीश से अपेक्षा की जाती है कि वह अपने निर्णयों को अपने पास ही सुरक्षित रखे। अर्थात् वह मीडिया को साक्षात्कार नहीं देगा।
    10. एक न्यायाधीश अपने परिवार, करीबी संबंधी एवं दोस्तों को छोड़कर उपहार या आतिथ्य स्वीकार नहीं करेगा।
    11. एक न्यायाधीश उस कंपनी के मामलों को नहीं सुनेगा और न ही निर्णय करेगा जिसमें उसके शेयर हैं किंतु यदि उसने अपने हितों का खुलासा किया है तो उस कंपनी के मामलों की सुनवाई कर सकता है।
    12. एक न्यायाधीश शेयर, स्टॉक आदि की अटकलें नहीं लगाएगा।
    13. एक न्यायाधीश को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से व्यापार या व्यवसाय में संलग्न नहीं होना चाहिये। (एक कानूनी आलेख या एक शौक के रूप में किसी भी गतिविधि का प्रकाशन व्यापार या व्यवसाय नहीं माना जाएगा)
    14. एक न्यायाधीश को किसी भी उद्देश्य हेतु फंड की स्थापना में योगदान करने के लिये नहीं कहना चाहिये। तथा सक्रिय रूप से खुद को भी उससे संबद्ध नहीं करना चाहिये।
    15. एक न्यायाधीश को अपने कार्यालय से जुड़े विशेषाधिकार के रूप में किसी भी वित्तीय लाभ की तलाश नहीं करनी चाहिये जब तक कि यह स्पष्ट रूप से उपलब्ध न हो। इस संबंध में किसी भी संदेह को मुख्य न्यायाधीश के माध्यम से हल किया जाना चाहिए और स्पष्ट किया जाना चाहिये।
    16. प्रत्येक न्यायाधीश को प्रत्येक समय इस बात के प्रति सचेत रहना चाहिये कि वह जनता की निगाह में है और उसके द्वारा कोई चूक नहीं होनी चाहिये। वह जिस उच्च पद पर आसीन हो उसका सार्वजनिक सम्मान हो।

न्यायिक जवाबदेही

(Judicial Accountability):

- एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में संवैधानिक अधिकारों एवं दायित्वों के संरक्षक के रूप में न्यायपालिका सार्वजनिक जवाबदेही से ऊपर नहीं हो सकती है।

- न्यायिक स्वतंत्रता और जवाबदेही के सिद्धांतों को कभी-कभी मौलिक रूप से एक दूसरे के विपरीत माना जाता है किंतु न्यायिक स्वतंत्रता और जवाबदेही परस्पर जुड़े हुए हैं।
- न्यायिक स्वतंत्रता 'स्वतंत्रता का एक अनिवार्य स्तंभ और विधि के शासन' को संदर्भित करता है।
- एक लोकतांत्रिक प्रणाली में न्यायिक जवाबदेही का सबसे मजबूत संभव साधन महाभियोग है। यह भारत में उपलब्ध मुख्य जवाबदेही तंत्र है।

न्यायिक नैतिकता (Judicial Ethics):

न्यायिक नैतिकता न्यायाधीशों की सही कार्यवाही से संबंधित मूल सिद्धांत हैं। इसमें नैतिक कार्यवाही, न्यायाधीशों का आचरण एवं चरित्र, उनके उद्देश्य (जिनमें क्या सही है और क्या गलत) शामिल होते हैं।

24 मई, 1949 को संविधान सभा में बहस के दौरान के. टी. शाह का वक्तव्य:

यह संविधान न्यायाधीशों, राजदूतों या राज्यपालों की नियुक्ति के संबंध में कार्यपालिका के हाथों में इतनी शक्ति एवं प्रभाव को केंद्रित करने का विकल्प चुनता है तो कार्यपालिका की तानाशाही प्रवृत्ति उभर सकती है। इसलिये ऐसी कुछ नियुक्तियों को राजनीतिक प्रभाव से हटाना चाहिये और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को राजनीतिक प्रभाव से पूरी तरह बाहर होना चाहिये।

आगे की राह:

- कार्यपालिका और न्यायपालिका का आपसी मेल-जोल न्यायपालिका की निष्पक्षता एवं स्वतंत्रता की अवधारणा को कम करने का काम करता है और न्यायपालिका के प्रति सामान्य जन के विश्वास को कम करता है क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों से अपेक्षा की जाती है कि संवैधानिक सिद्धांतों एवं विधि के शासन को सर्वोपरि रखते हुए कार्यपालिका के खिलाफ मामले तय करेंगे।
- चूँकि न्यायपालिका की स्वतंत्रता भारत के संविधान की मूल संरचना है अतः इस स्वतंत्रता को संरक्षित किया जाना चाहिये।

स्रोत: द हिंदू